Review Of Research
Vol. 3, Issue. 4, Jan. 2014
ISSN:-2249-894X
Available online at www.ror.isrj.net

समाज के बदलते स्वरूप में सिनेमा भूमिका:एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

मोहम्मद फ़रियाद , मु.अफ़सर अली राईनी

सहायक प्रोफेसर,जनसंचार विभाग,मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय हैदराबाद
पीएच-डी संचार एवं मीडिया अध्ययन केंद्र ,महात्मा गांधी अन्तरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय ,वर्धा ,महाराष्ट्र

सारांश-

जनसंचार के विभिन्न माध्यमों में से सिनेमा नें अपनी उपस्थिति सबसे जोरदार ढंग से दर्ज कराई है । इस बात से कोई इनकार नहीं कर सकता कि शुरुआती दौर में लोगों नें सिनेमा को मनोरंजन के एक उपकरण के तौर पर ही लिया लेकिन जैसे-जैसे समय बीता इसनें लोगों के मन मस्तिष्क पर गहरी छाप छोड़ी। स्वतंत्रता के बाद इसने तो मानो समाज सुधार का जिम्मा ही ले लिया । बातचाहे स्त्री सुधारों की हो छुआ छूत की हो अनुचित सामाजिक ढांचे की हो या जटिल बीमारियों से अवगत कराने की होसिनेमा नें बढ़कर अपना योगदान दिया है

प्रस्तावना-

सिनेमा अपनी स्थापना के समय से ही जनसंचार का एक प्रमुख एवं प्रभावकारी संचार माध्यम रहा है। इस रूप में सिनेमा मनोरंजन, सूचना और विचारों के प्रसारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। अन्य माध्यमों की तुलना में सिनेमा किसी विचारया सूचना को आम जनों तक पहुंचाने में शुरूआत से ही सफल रहा है। इसके सफलता का सबसे बड़ा कारण इसके माध्यम का श्रव्यदृश्य होना है। श्रव्य-दृश्य माध्यम होने के कारण यह किसी भी विषय को बड़े प्रभावी ढंग से दर्शकों के बीच प्रस्तुत करता है। यही कारण है कि दर्शकों के साथ समाज में उपस्थित बुद्धिजीवियों के बीच इसका आकर्षण ज्यादा है। यही संचार का एक ऐसा माध्यम है जो समाज में उपस्थित गौण-विमर्शों को समाज के सामने प्रस्तुत करता रहता है।

आज का युग सूचना एवं प्रोद्योगिकी का युग है। सूचना प्रोद्योगिकी के इस युग ने मार्शल मैक्लूहान के विश्वग्रामकी संकल्पना को सिद्ध करने में बड़ा योगदान दिया है। जिसके कारण आज पूरा विश्व एक पटल पर खड़ा हो गया है। आज विश्व में घटित होरही कोई भी घटना आमजनों से अछूती नहीं रहती है, चाहें समाचारपत्र हो, रेडियों, टेलीविजन, इंटरनेट, सिनेमा या वृत्तचित्र। किसी न किसी संचार माध्यम से, विश्व में घटित हो रही किसी भी सूचना की जानकारी आम जन तक पहुंच जाती है।

आज हमारे बीच राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय मुद्दों पर विचारविमर्श इस प्रकार से हो रहा है जैसे हम परिवार के लोगों से करते है। वैश्वीकरण के इस युग में इन सारी चीजों का श्रेय संचार माध्यमों को ही जाता है। जो हमारी सामाजिक एवं सांस्कृतिक परंपराओं व रूढ़ियों की जटिलताओं को कमजोर करते हुए मिलीजुली संस्कृति एवं नए मानव मूल्यों की स्थापना कर रहा है। इन सभी में सिनेमा अग्रणी रूप अपनी भूमिका का निर्वाह कर रहा है। साथ ही समयसमय पर सिनेमा समाज को नए-नए परिर्वतन करने के लिए प्रेरित करता रहा है।

आज हम जिस परिर्वतन के युग में ज़ी रहे है उसमें एक बड़ी भूमिका सिनेमा ने निभाई है। लोगों की जीवनशैली और रहन सहन में जिस प्रकार से परिर्वतन हुआ है उससे आज हमारे सामने एक नए समाज को प्रस्तुत किया है। व्यक्तिभले ही अभावों में जीवन-

यापन कर रहा हो लेकिन वह जीवन के सुखद पहलु को समझ रहा है और उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रयासरत है। आज ह्म ने जिस प्रकार दैनिक जीवन मे इस्तेमाल होने वाली वस्तुओं का सामन्यीकरण किया है। इसमें सबसे बड़ा योगदान सिनेमा कहै।

ध्यान देने योग्य बात है कि शुरूआत से ही हमलोग पश्चिमीकरण का अनुसरण कर रहे है। वहां की जीवनशैली संस्कृति और पहनावे को अपना रहे है। संचार माध्यमों के विकास ने इसमें और तीव्रता लाई है और साथ ही सिनेमा के आ जाने केबाद हमलोग सारी चीजें पश्चिम से कॉपी करने लगे है। इतना तक कि पहनावे में भी। उत्तर भारतीयों का पहनावा शुरूआत से ही स्त्रियों के लिए साड़ी और पुरूषों के लिए धोती-कुर्ता आदि रहा है। लेकिन सिनेमा ने हमारे पहनावे में भी परिर्वतन ला दिया। आज कोर्ट-पैंट एक रइसों को पहनावा बनकर सामने आया है जो हमारे भौगोलिक दृष्टिकोण से जरा भी मेल नहीं खाता है। पश्चिमी देशों में ठंड ज्यादा होने की वजह से कोर्ट-पैंट का प्रचलन है। टाई का इस्तेमाल इसलिए किया जाता है कि अगर ऊपर शर्ट का बटन खुला रह जाए तो उसे ढ़कने के लिए ताकि ठंड गले तक न पहुंचे।

सिनेमा श्रव्य-दृश्य माध्यम होने के कारण यह चीजें हमारे समाज को ज्यादा आकर्षक लगी, इसीलिए भारतीय समाज ने इसे अपना लिया। आम लहज़े में इस अंतर को साफतौर से समझा जा सकता है। इस लिहाज से यह उदाहरण काफी होगा कि किस प्रकार सिनेमा ने भारतीय जीवनशैली को प्रभावित किया है।

अध्ययन का उद्देश्य-

- हिन्दी सिनेमा का विस्तृत अध्ययन करना।
- सिनेमाई विषयों का अध्ययन करना।
- हिन्दी सिनेमा के प्रभाव का अध्ययन करना।

उपकलपना

- सिनेमा सामाजिक परिवर्तन का प्रमुख उपकरण है।
- दूसरे माध्यमों के मुकाबले सिनेमा का असर लोगों पर अधिक होता है।
- सिनेमा के कारण समाज में कई परिवर्तन हुए हैं।

अध्ययन का क्षेत्र और सीमा –इस अध्ययन में हिन्दी सिनेमा को रखा गया है। और इस बात को पता लगाने की कोशिश हुई है कि सिनेमा नें लोगों के सामाजिक]सांस्कृतिक और राजनैतिक जीवन को किस तरह से प्रभावित किया है।

शोध प्रविधि

शोधार्थी द्वारा निम्न शोध प्रविधिओं का प्रयोग किया गया है

- अंतर्वस्तु विश्लेषण
- साक्षात्कार प्रविधि
- निदर्शन प्रविधि
- द्वितीयक प्रविधि
- अवलोकन प्रविधि

भारतीय सिनेमा:

भारत में सिनेमा के आगमन से पूर्व ही श्रृंखलाबद्ध चित्रों के माध्यमों से कथा कहने का प्रचलन रहा है। मंच या फिर किसी अन्य जगहों पर किसी विषय से संबंधित कथा को श्रंखलाबद्ध चित्रों के रूप में रखकर किसी जलते हुए लैम्प के सामने कथा सुनाने से

दर्शकों पर गहरा प्रभाव पड़ता था। इन कथाओं के बीच-बीच में मंच पर बैठे हुए गायकों के द्वारा उस कथा से संबंधित गीतों के गायन की भी परंपरा थी। वैसे अधिकतर ऐसी कथाएं धार्मिक हुआ करती थी जिसके फलस्वरूप दर्शकों की संख्या में बढोत्तरी हो जाती थी। साथ ही कुछ लोगों के लिए यह व्यापार का भी अच्छा साधन था । 1840 में जब भारत में स्थिर फोटो कैमरे का आगमन हुआ तो ऐसी कथाओं एवं प्रस्तुतियों आदि में में स्थिर फोटो का प्रयोग होने लगा। जिसके कारण एक बड़ा दर्शक वर्ग इसके साथ हो लिएजिसके फलस्वरूप यह व्यापार के रूप में फलने-फुलने लगा।

फोटो कैमरा के आने से भारत के लोगों में मुख्यतौर से बुद्धिजीवियों के बीच सृजनात्मकता की होड़े लग गई। साथ ही यह धीरे-धीरे अमीरों के बीच एक स्टेटस-सिम्बल के रूप में अपना विशेष स्थान बनाता चला गया। सबसे पहले स्थिर फोटोग्राफी के विकास के बाद भारतीय सिनेमा ने अपने विकास के लिए मुंबई को चुना।

7 जूलाई, 1896 का दिन भारतीय इतिहास का एक अत्यंत महत्वपूर्ण दिन रहा जो हमेशा याद किया जाएगा। इस दिन मुम्बई के वाटसन होटल में ल्यूमियर ब्रादर्स ने एक साथ छः मूक फिल्मों का प्रदर्शन किया। उस दिन वॉटसन होटल में सबसे पहलेइंट्री ऑफ सिनेमैटोग्राफी का प्रदर्शन किया गया। इनमें से एक मूक सिनेमा एराइवल ऑफ ट्रेन का जब प्रदर्शन किया गया तो ऐसी मान्यता है इस फिल्म के दृश्य (जिसमें टेªन के आगमन के दृश्य को फिल्माया गया था) से सभी घबरा गए और अपने सीट छोड़ खड़े हो गए थे। तो इसी रोमांचकारी अनुभव के साथ भारत मेंसिनेमा का आगमन हुआ।

भारतीय सिनेमा निर्माण के इतिहास में पहला नाम हरिशचंद्र सखाराम भतवेडकर का आता हैं जिन्होंने 1896 में पहली कुश्ती प्रतियोगिता के कुछ दृश्यों का फिल्मांकन करके लोगों के समक्ष प्रस्तुत किया था। इन्होंने ही भारत की प्रथम स्वदेशी फिल्म राजा हरिशचंद्र 1913 में निर्माण किया था। इसी के साथ भारत में एक नए परिवर्तन की बयार शुरू हुई।

दादा साहब फाल्के ने सन 1917 में दो कथा फिल्म कृष्ण जन्म और लंका दहन के नाम से बनाई। यह फिल्म राम-रावण युद्ध और हनुमान द्वारा लंका जलाए जाने की धार्मिक कथा पर आधारित थी। उड़ते हुए हनुमान को देखना और भगवान श्रीराम के दर्शन करना, इन दोनों प्रसंगों से यह आशय लगाया जा सकता है कि उस समय दर्शकों पर इस फिल्म का क्या प्रभाव पड़ा होगा। लोग मीलों की दूरी तय करके, अपने-अपने गांवों और कस्बों से बैलगाड़ियों पर लदकर इस सिनेमा को देखने केलिए पहुंचते थे।

फिल्म अछुत कन्या ने परिवर्तन की एक नई लकीर खींच दी। निरंजन पाल की अंग्रेजी में लिखी गई कहानी द लेवल क्रॉसिंग पर आधारित फिल्म अछूत कन्या ने भारतीय समाज को एक नई दिशा दी। जो दो विभिन्न जाति के प्रेमियों की प्रेमकथा पर आधारित थी जिसका नायक प्रताप रूढ़ीवादी ब्राहम्ण परिवार से आता है और नायिका कस्तूरी एक अछूत परिवार की लड़की है। लड़की के पिता जहां रेलवे में कार्य करते है वही दूसरी ओर लड़के के पिता का स्वयं का दुकान है। दोनों के बीच दोस्ती भी है। लेकिन जब इन्हें यह पता चलता है कि प्रताप और कस्तुरी एक-दूसरे को बेपनाह प्यार करते है तो दोनों की दोस्ती दुश्मनी में बदल जाती है। ऐसे में प्रताप के ब्राह्मण पिता को ज़रा भी बर्दास्त नहीं होता है कि उसका बेटा किसी अछूत को अपनी घर की बहू बनाए। इसलिए दोनों को एक-दूसरे से अलग कर दिया जाता है। इस फिल्म को अगर ध्यान से देखा जाए और उस समय के समाज की कल्पना की जाए जिस समय इस फिल्म का निर्माण हुआ तो यह बातें साफतौर से स्पष्ट हो जाएगी कि निर्देशक हिमांशु रॉय की दृष्टि कितनी वृहत थी। इन्होंने इस फिल्म के जरिए उस समय भारतीय समाज पर कितनी गहरी चोट की, इस बात को स्पष्ट तौर पर समझा जा सकता है। भारतीय परिदृश्य में इस फिल्म को परिर्वतन के तौर पर देखा जा सकता है जिसने भारतीय समाज पर ऊंच-नीच के अवधारणा पर चोट की, साथ ही लोगों को एक नई दिशा की ओर सोचने को विवश कर दिया ।

सिनेमा और स्त्री:

वर्तमान में भारतीय सिनेमा मे कई स्त्री नायिका, निर्देशक, कलाकार, गायिका आदि कार्य कर रही हैं। साथ ही फिल्म निर्माण के हर एक क्षेत्र में स्वयं का कौशल दिखा रही है। आज हमारे सामने कई ऐसे फिल्म के उदाहरण मिल जाएगे जो महिला प्रधान रही है और जिनमें नायिकाओं ने फिल्मों को हिट कराया है। डर्टी पिक्चरपरजानिया लज्जा, दामिनी आदि भारतीय सिनेमा में कई ऐसे फिल्म मिल जाएगें जिसने भारतीय परिदृश्य में स्त्री को एक नई आइडेंटेटी गढ़ने का मौका दिया है। साथ ही इसने स्त्री-विमर्शों से जुड़ी सभी सवालों को एक नया आयाम दिया है जो समय-समय पर स्त्री प्रश्नों और स्त्री-मुक्ति के मुहावरों के रूप में दर्ज किए गए है। इस लिहाज से सिनेमा ने स्त्री के आईडेंटेटी को बदलने का प्रयास किया है और बहुत हद सिनेमा इस प्रयास में सफल भी हुई है। दादा साहब फाल्के द्वारा निर्मित राजा हरिश्चंद्र को ही लिजीए, उस समय महिला कलाकार के रूप में काम करने के लिए कोई तैयार नहीं थी। राजा हरिश्चंद्र

तो एक धार्मिक मिथकीय कथा थी इसके बावजूद फाल्के साहब रानी तारामती की भूमिका निभाने वाली महिला कलाकार को खोजने में विफल रहे। इतना ही नहीं जो महिलाए समाज से बहिष्कृत थी और नाचने-गाने का काम किया करती थी। उन्होंने भी सिनेमा में काम करने से इंकार कर दिया। इसका कारण कहीं न कहीं समाज की वह व्यवस्था से है जो सामंतवादी एवं रूढ़ीवादी वर्ग ने बनाई रखी थी। यही कारण था कि फाल्के साहब को अपने इस फिल्म राजा हरिश्चंद्र के लिए एक स्त्री कलाकार की जगह पुरूष कलाकार को फिल्म में लेना पड़ा।

लेकिन जहां तक स्त्री कलाकारों की बात है फाल्के साहब ने एक बार विफल होने के बाद अपनी कोशिश नहीं छोड़ी। 'मोहिनी भस्मासूर में काम करने के लिए इन्होंने आखिर एक तवायफ कमलाबाई गोखले को तैयार कर ही लिया। जिसने कलांतर में स्त्रियों को जबर्दश्त लोकप्रियता और सिनेमा की ओर महिलाओं को आर्कषित किया। जिसके फलस्वरूप महिला भी फिल्म निर्माण से जुड़ी विभिन्न बारीकियों से रूबरू होने लगी और समय के साथ स्वयं के इस क्षेत्र में साबित भी किया। 1925 में फातिमा बेगम ने बुलबुले परिस्तान बनाकर पहली भारतीय सिनेमा कलाकार के रूप में स्वयं का स्थान सुनिश्चित कर लिया। इसके बाद तो हर स्तर पर महिलाएं सिनेमा की ओर आकर्षित हुई। जुबैदा गौहरबाई जद्दनबाई सरदार अख्तर सरीखें कई महिलाएं फिल्मों में आई और कईयों ने तो फिल्म निर्माता, निर्देशकों और कलाकारों से शादी भी की। समय के साथ कुलीन घरों की पढ़ी-लिखी महिलाओ का पर्दापण सिनेमा में हुआ। अब तो कोई ऐसा सोचता भी नहीं की कभी ऐसा भी दौर रहा होगा जिस समय फिल्मकारों को महिला कलाकार नहीं मिलती थी।

सिनेमा ने महिलाओं को आज एक नया आयाम दिया है। सिनेमा के क्षेत्र में महिलाएं किसी भी क्षेत्र में आज पुरूषों से पीछे नहीं है। स्त्री के चरित्र को लेकर जो सामंती भावना थी, सिनेमा ने उसे बदलने और झकझोरने की भरपूर कोशिश की है। आज नायक ही नहीं नायिकओं ने भी समाज की संवेदनशीलता को उजागर किय है। एक ऐसा समाज जहां पितृसत्ता के तथाकथित पवित्र घेरें में स्त्रियाँ दोयम दर्जा जीने को विवश थी उनके श्रम और भावनाओं को उचित सम्मान नहीं होता था। सिनेमा ने समाज को एक नई संवेदना दी और स्त्रियों के लिए एक नई परिभाषा गढ़ी है।

भारतीय समाज और जनचेतना

भारतीय समाज शुरूआत से ही सिनेमा से बहुत प्रभावित रहा है। भारतीय समज में सिनेमा इस कदर घुल-मिल गया है कि राजनैतिक और सामाजिक आंदोलनों में अधिक से अधिक लोगों को जोड़ने के लिए सिनेमा का इस्तेमाल किया जाने लगा है। संचार के इस माध्यम ने सूचनाओं को मनोरंजीत ढ़ंग से प्रस्तुत करने विशेष सहयोग किया है। यही मुख्य कारण है कि समाज में उपस्थित बुद्धिजीवियों, सामाजिक कार्यकताओं और फिल्मकारों ने सिनेमा का इस्तेमाल समाज में उपस्थित कुरीतियों को रेखांकित करने के लिए विशेष रूप से किया। यही कारण है कि इसका विशेष प्रभाव दिखता हैं।

समाज के साथ फिल्मों का अटूट रिश्ता केवल गीत-संगीत तक सीमित नहीं है। सच तो यह है कि सिनेमा हमारे समाज और संस्कृति का दपर्ण है। फिल्मों के इतिहास को देखें तो पता चलता है कि फिल्में समानांतर चलती है। गर्म हवा अर्थ 1947 जैसी फिल्मों नें विभाजन की त्रासदी और अल्पसंख्यकों की पीड़ा को मूर्तरूप से दिखाती हैं तो थ्री इडियट रंग दे बसंती डेली-बेली ए वेडनेसडे खोसला का घोसला जैसी फिल्में आज की युवा वर्ग और साथ ही साथ मध्य वर्ग की चिंताओं को मुखर रूप से व्यक्त करती है। इस तरह हम सिनेमा को भारतीय सिनेमा की प्रगति एवं परिर्वतन का गवाह मान सकते हैं। भारतीय फिल्में देश की परिस्थितियों और सामाजिक परिवर्तन से उपजी समस्याओं व चिंताओं का बखूबी चित्रण करती है। देश जब औपनिवेशिक सत्ता से मुक्ति के लिए संघर्ष कर रहा था उस समय ब्रिटिश सरकार के अंकुशो के बावजूद हमारे फिल्मकारों ने किस्मत के गीत दूर हटो ऐ दुनिया वालों हिंदुस्तान हमारा है मजबूर फिल्म का गीत अब डरने की बात नहीं गोरा छोरा चला गया शहीद फिल्म का गीत वतन की राह में वतन के नौजवां शहीद हों के माध्यम से लोगों के मन में देशभक्ति का मंत्र फूकनें का सफलतम प्रयास किया गया।

सिनेमा और शिक्षा

सिनेमा पूरी तरह से मनोरंजन की चीज नहीं है। यह समाज में नये विचार और दृष्टिकोण लाने के अलावा लोगों को जागरूक भी करता है। शिक्षा जगत और इससे जुड़ी समस्याओं को भी सिनेमा ने समय-समय पर उजागर किया है। यह और बात है कि फिल्मकारों ने शिक्षा प्रधान फिल्में बहुत कम ही बनायी हैं, लेकिन जो भी फिल्में बनी है उसने भारतीय समाज को अवश्य झकझोरा है।

चूंकि सिनेमा स्वयं सशक्त संचार का माध्यम है इसलिए यह जिम्मेदारी भी बढ़ जाती है कि वह इन सारी चीजों को सही ढंग से प्रस्तुत करे, बिना कोई मसाला के। दरअसल सिनेमा समाज का यथार्थवादी चित्रण करता है। समाज के ज्वलंत मुद्दों को रूपहले पर्दे पर दिखाता और सवाल भी उठाता है। फिर चाहे व तारे जमीन पर हो या आरक्षण हो राजनीति हो या स्वदेश, पीपली लाईव या फिर पाठशाला हो। फिल्में कहीं न कहीं समाज से जुड़ी सच्चाई को उजागर करती है और समाज को इस विषय पर सोचने के लिए मजबूर करती है।

प्रकाश झा द्वारा निर्मित फिल्म आरक्षण का प्रदर्शन हुआ तो काफी जगहों पर इस फिल्म के विषय को लेकर विरोध प्रदर्शन हुआ। कई जगहों पर तो इस फिल्म के प्रदर्शन पर रोक लगा दी गई। लेकिन इसके बावजूद प्रकाश झा शिक्षा जगत से जुड़ी समस्याओं को रेखांकित करने में सफल रहे। फिल्म तारे जमीन पर एक डिसलेक्सिया बीमारी से पीड़ित बच्चे के इर्द-गिर्द कहानी गढ़ने की कोशिश की गई। इस फिल्म में ईशान अवस्थी जिसे पढ़ने-लिखने में समस्या आती है लेकिन वह सृजनात्मक एवं संवेदनशिल बच्चा है। यह फिल्म पूरी तरह से इसी बच्चे पर केंद्रित हो जाती है और इस बच्चे के संवेदनाओं से अन्य को जोड़ती है साथ ही इस फिल्म के जरिए पैरेंट्स और शिक्षकों की क्या जिम्मेदारी हो इसकी ओर विशेषतौर से इशारा करती है। इसके अलावा भी ब्लैक इकबाल स्टेनली का डिब्बा थ्री इडियट्स जैसी फिल्में लिक से हटकर बनायी गयी है जिसने शिक्षा जगत को सहज ही अपनी ओर आकर्शित किया है।

निष्कर्ष

निर्विवाद रूप से यह कहा जा सकता है कि सिनेमा ने समाज के हर क्षेत्र को प्रभावित किया है। इसने समाज को एक नया आयाम दिया है। समाज में हमारे उन सभी गौण मुद्दों को छुआ है जो सामाजिक आंदोलनों से बचे रह जाते हैं और इसने साथ ही साथ आदर्श समाज बनाने को प्रेरित किया है। जहां एक ओर समानांतर सिनेमा का मुख्य लक्ष्य मानवीय जीवन के यथार्थ व दर्द को व्यापक तौर पर उद्घाटित करना तथा अन्याय व अत्याचार के विरूद्ध आवाज बुलंद करने में हमारी मदद करती है। इसकी भाषा, सोच एवं प्रस्तुति में आधुनिक चिंतन की झलक थी।

इस सच्चाई से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि फिल्मों नें समाज में हिंसा व भौड़ापन अनुशासनहीनता यौनहिंसा तथा अपराध को बढ़ावा देने का भी दोषी है। इन तमाम विरोधाभाषों के बावजूद यह भी सत्य है कि सिनेमा देश के सामान्य जनजीवन से इतना घुलमिल गया है कि इसके बिना समाज में गतिशिलता और जीवंतता नहीं बना रह सकता।

सिनेमा ने समाज के हर पहलुओं एवं संवेदनाओं को छूने का प्रयास किया है। अपने इस माध्यम से जहां तक हो सका है वहां तक इन सभी बिंदुओं को चित्रित्र करने की कोशिश की है। शबाना आजमी और नंदिता दास की मुख्य भूमिका से सजी फायर समलैंगिकता के बहाने समकालीन समाज में स्त्रियों की स्थिति पर सवाल उठाया है। वाटर ने हिंदू समाज में विधवाओं और देवदासिओं की तकलीफ एवं जिंदगी को पर्दे पर उतारने की सार्थक कोशिश की गई तो वहीं दूसरी ओर सयुंक्त परिवार एवं पारिवारिकविघटन पर आधारित फिल्में घर हो तो ऐसा संसार खानदान काला बाजार स्वर्ग-नरक आदि फिल्में भी आई। इन फिल्मों ने स्वयं के विषय के जरिए समाजिक सुधार का कार्य किया। सच्चाई ईमानदारी नैतिकता जैसे आदि मूल्य इन फिल्में में दर्शाया गया। अंतरजातिय विवाह एवं संप्रदायिकता जैसी सामाजिक प्रश्नों को लेकर फिल्म बनायी गयी जो बहुत ही लोकप्रिय रही। प्राचीन समय से ही हमारे समाज में दहेज एक सामाजिक बुराई के तौर पर रही है जिसको लेकर फिल्मकारों ने भी अपनी संवदेना दिखाई व कई फिल्मों का निर्माण किया। बहू की आवाज राजमनी जैसी आदि फिल्मों ने इस प्रकार के विषयों को प्रस्तुत कर सामाजिक सुधार का मार्ग प्रशस्त किया है।

संदर्भ स्रोत

सिन्हा, प्रसूनः भारतीय सिनेमा.....एक अनन्त यात्रा श्री नटराज प्रकाशन दिल्ली
ब्रह्मात्मज अजयः सिनेमा समकालीन सिनेमा वाणी प्रकाशन नई दिल्ली
आजकल अक्टूबर 2012 (पत्रिका)
योजना अगस्त 2011 (पत्रिका)
समसामयिक सृजन अक्टूबर- मार्च 2012-2013 (पत्रिका)

मु.अफ़सर अली राईनी
पीएच-डी संचार एवं मीडिया अध्ययन केंद्र ,महात्मा गांधी अन्तरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय ,वर्धा ,महाराष्ट्र